International Journal of Applied Research 2017; 3(3): 547-549

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(3): 547-549
www.allresearchjournal.com
Received: 11-01-2017
Accepted: 12-02-2017

डॉ0 राज पाल
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, सी0आर0 किसान महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा, भारत

Correspondence
डॉ0 राज पाल
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, सी0आर0 किसान महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा, भारत

विश्वशान्ति और वैदिक राजनीति

डॉ0 राज पाल

प्रस्तावना
वर्तमान वैज्ञानिक युग में जब मानव भौतिकोन्नति के चरमोत्कर्ष को छूने का गौरवाभिमान कर रहा है, मानव के नित्य नये–नये अविष्कारों, अनुसंधानों एवं उत्कृष्ट तकनीकी ज्ञान ने उसे इतना शक्ति सम्पन्न कर दिया है कि मानो दैविक शक्तियाँ उसके समक्ष सेवार्थ हाथ बाँधे खड़ी हैं। दूरसंचार क्रान्ति ने 'ग्लोबल विलेज' की कल्पना को जन्म दिया है। चिकित्सीय क्षेत्रों में नये–नये कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं। गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ मानव जाति के वैभव, उन्नति, अशान्त, दुखाक्रान्त और भयाक्रान्त दिखलाई देती है। ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ, अज्ञान, अन्याय और अभावादि शत्रुओं के घोर आक्रमण से जर्जर हो रही है। सम्पूर्ण मानव समाज आधिदैविक 'अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्पादि' आधिभौतिक 'हिंसक जीव–जन्तुओं तथा डाका, लूट, युद्धादि से होने वाला कष्ट' तथा आध्यात्मिक 'अज्ञान, स्वार्थ, विक्रोश, आलस्य और अभाव' नामक तापत्रय से संतप्त है। आतंकवाद जैसी भीषण समस्या ने विश्व को हिलाकर रख दिया है। सर्वत्र अशान्ति का साम्राज्य व्याप्त हो गया है। विश्वशान्ति को स्थापित करने में मार्क्सवाद, साम्यवाद, समाजवाद जैसे आन्दोलन निष्फल हो चुके हैं। विश्वशान्ति स्थापनार्थ बुद्धिजीवी वर्ग का चिन्तन चल रहा है।
सम्पूर्ण मानव जगत् राजा तथा प्रजा रूपी दो वर्ग में विभाजित है। अशान्ति के समस्त कारक दोषों को दूर करने का दायित्व राजा एवं प्रजा दोनों का होता है। किन्तु यह सब एक सार्वभौम, सत्य, व्यावहारिक राजव्यवस्था को अपनाकर ही सम्भव है। वेद एक ऐसी ही राज व्यवस्था का प्रतिपादन करते हैं। भारतीय परम्परानुसार वेद अपौरुषेय एवं अनन्त ज्ञान के भण्डार हैं। सब सत्य विद्याओं का आदि स्रोत होने से सर्वग्राह्य है। आइये! वेदालोक में देखने का प्रयास करते हैं कि विश्व के सभी राष्ट्रों में किस प्रकार की राज व्यवस्था प्रवृत्त होने से विश्वशान्ति स्थापित हो सकती है।

आदर्श प्रजातन्त्र
वेद आदर्श प्रजातन्त्र का विधान करता है। वेदानुसार एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए, किन्तु राजा जो सभापति तदाधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के अधीन रहना चाहिए। अन्यथा स्वाधीन राजा राज्य में प्रवेश करके प्रजा का नाश करता है।

निर्वाचन व्यवस्था
वेद में प्रजा द्वारा राजा चुने जाने का उल्लेख मिलता है। किन्तु चुनाव का अधिकार उत्तम कोटि के मनुष्यों अध्यापक, उपदेशक कोटि के लोगों को ही है, सर्वसाधारण को नहीं। राजा को चुनने वालों को देव कहा गया है। जो शतपथ के अनुसार विद्वान ही होते हैं।

राजा
संसार के सभी मनुष्य सभी कार्यों में समर्थ नहीं हो सकते। इसलिए वैदिक धर्म में वर्ण व्यवस्था का विधान है। उसी के अन्तर्गत राष्ट्र रक्षा के व्रती क्षत्रिय कहलाते हैं। उनमें जो श्रेष्ठ होता है, उसे राजा के पद पर अभिषिक्त किया जाता है। विद्वान लोग ऐसे मनुष्य को राजा बनायें जो राष्ट्र की रक्षा कर सके, जो शत्रुओं को रुलाने वाला, प्रजा को ऐश्वर्य देने वाला, सत्यनिष्ठ तथा तपस्वी हो। जो सत्य की कामना वाला, पवित्रात्मा वरणीय, सुखों का दाता, जितेन्द्रिय, राष्ट्र का पालक, नरों में श्रेष्ठ, हिंसक शत्रुओं का विनाशक, उत्कृष्ट गुण और विज्ञान वाला तथा प्रजा की वाणी सुनने वाला हो। वही राजा होने योग्य है जिसे समस्त प्रजाएँ स्वीकार करें। जो अग्नि के समान प्रतापी, जागरूक, बली, दुष्ट हिंसक, प्रजा द्वारा पुकारने योग्य हो, वही सिंहासन पर बैठने का अधिकारी है। राजा राष्ट्र की धुरी होता है। अतः यथा राजा तथा प्रजा। वेद राजा को आदर्श रूप देता है।

उसके जीवन में सदाचार की सुगन्धि हो। अथर्ववेद में ब्रह्मचर्य के तप से राजा द्वारा राष्ट्र रक्षा की चर्चा मिलती है। शान्त तथा जितेन्द्रिय ही राज्याधिकारी हो सकता है।

शासन व्यवस्था

शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए ऋग्वेद में तीन सभाओं का उल्लेख मिलता है। अथर्ववेद में भी राजधर्म के संचालनार्थ सभा, समिति तथा सेना की चर्चा मिलती है। तीनों सभाएँ धार्मिक सभ्यजनों की होनी चाहिए।

राजसभा

राजसभा द्वारा राजा राष्ट्र की आन्तरिक तथा बाह्य सुरक्षा को निष्पन्न करता है। बाह्य सुरक्षा हेतु सेना तथा दूत आदि का संग्रह करता है तथा आन्तरिक व्यवस्था के अन्तर्गत न्यायपूर्वक प्रजारक्षण का कार्य करता है। इसके लिए वह प्रजा के आरोग्य, व्यापार, पशुरक्षा, न्याय, यातायात को उन्नत करने आदि की सुविधा जुटाता है।

विद्यासभा

राष्ट्र में विद्या का प्रसार सभ्य समाज के लिए आवश्यक है। राष्ट्र में कोई व्यक्ति अपठित न रहे, यह प्रयत्न राज्य की ओर से सतत् होना चाहिए।

धर्मसभा

समाज में धर्म का होना अत्यन्त आवश्यक है। धर्म के अभाव में समाज में अनैतिकता जन्म ले लेती है। वेद में जितेन्द्रिय, धर्मात्मा, परोपकार में प्रीति रखने वाले विद्वानों को धर्मोपदेश के लिये राजा द्वारा नियुक्त करने का उल्लेख किया गया है। इन्हीं के उपदेश आदि से राजा भी धर्मात्मा बनता है।

सभासदों की योग्यता

सभासदों की नियुक्ति विद्वानों द्वारा अच्छे प्रकर परीक्षा करके की जानी चाहिए। सभाओं के सभासद विद्वान, वीर, तेजस्वी, धनाढ्य, कुलीन, प्रशंसित, निरपराधी, उत्कृष्ट शरीर वाले, विद्यावयोवृद्ध हों।

अमात्य

यदि राजा और मन्त्री–जन परस्पर सम्मत होकर नम्रता से राज्य का शासन करते हैं तो द्रोह, निन्दा और अधर्माचरण से पृथक होकर सदाचरण वाले होकर दसो दिशाओं में कीर्ति फैलाते हैं। जो अमात्य शत्रुओं से छले न जायें, सब ओर से गुणों को ग्रहण कर दोषों को त्यागें, उन्हें राजा अपने अमात्य बनायें।

राजदूत

दूतों को सब शास्त्रों में प्रवीण, राजधर्म को ठीक–ठाक जानने वाले पर–अपर इतिवृत्तों के वेत्ता, धर्मात्मा, निर्भयता से सब विषयों के वक्ता और शूरवीर होना चाहिए। राजा को उचित है कि जो पूर्ण विद्वान, प्रगत्भ, स्नेही, धार्मिक जन हैं और राज्य के व्यवहार को वहन कर सकते हैं, उन शूरवीर सुहृद मनुष्यों को दूत बनाकर राज्य के समाचारों को जानें।

युद्ध

राजा का कर्त्तव्य बाह्य तथा आन्तरिक सुरक्षा कर प्रजा का पालन करना है। बाह्य तथा आन्तरिक सुरक्षा के लिए युद्ध अनिवार्य हो जाता है। शत्रु विनाश किये बिना सुराज्य नहीं हो सकता। इसके विपरीत जब मनुष्य लोग परमेश्वर की आराधना करके अच्छे प्रकार सब सामग्री को संग्रह करके युद्ध में शत्रुओं को जीतकर चक्रवर्ती राज्य को प्राप्त कर प्रजा का अच्छे प्रकार पालन करके बड़े आनन्द का सेवन करते हैं, तब उत्तम राज्य होता है।

सेना

युद्ध के लिए सेना की अपेक्षा है, सुशिक्षित सेना युद्ध विजय के लिये अतीव आवश्यक है। अतः राजपुरुषों को शत्रुओं से अप्रधर्षिणी हृष्ट–पुष्ट सेना बनानी चाहिए जिसमें सुन्दर परीक्षित यौद्धा और अध्यक्ष हों तथा वे अस्त्र–शस्त्र संचालन में कुशल हों। राजा को चाहिए कि जिन साधनों से और दृढ़ राज सेनांगों से प्रजा की सब प्रकार रक्षा हो सके, उनका प्रबन्ध करे। उन्हीं पुरुषों को सेना में भर्ती करना चाहिए जो शत्रुओं को जीत सकें। राजा को चाहिए कि सेना के भोजन–प्रबन्ध को उत्तम रखे और सेना के आरोग्य के लिए कुशल वैद्यों को रखे।

सेनापति

सेना के संचालनार्थ सेनापति की आवश्यकता होती है। कैसे पुरुषों को सेनापति नियुक्त किया जाए, इसका वेदों में निम्न निर्देश अधिगत होते हैं। राजा को चाहिए कि जो धनुर्वेद और ऋग्वेदादि शास्त्रों को जानने वाला, निर्भय, सब विद्याओं में कुशल, अति बलवान, धार्मिक, अपने स्वामी के राज्य में प्रीति रखने वाला, जितेन्द्रिय, शत्रुओं को जीतने वाला तथा अपनी सेना को सिखाने और युद्ध कराने में कुशल वीर पुरुष हो, उसको सेनापति के अधिकार पर नियुक्त करे।

न्याय व्यवस्था

शासन में न्याय का बहुत महत्त्व है। न्याय के अभाव में सर्वत्र अराजकता की स्थिति होने से भय व्याप्त हो जाता है तथा मत्स्य न्याय प्रवृत्त होने लगता है। इस भयावह तथा दुःखद स्थिति को दूर करने के लिए राजा स्वयं तथा अन्य न्यायाधीश विद्वान रखकर प्रजाजनों को यथोचित न्याय प्रदान करता है। राजा के प्रत्येक व्यक्ति को न्याय का आचरण करना चाहिए, चाहे वह स्वयं राजा हो अथवा सभापति, सेनापति, राजसभासद, राजपुरुष, न्यायाधीश अथवा अन्य कोई भी हो, न्याय सभी के लिए करणीय है।

दण्ड व्यवस्था

शासन व्यवस्था में दण्ड का बड़ा महत्त्व है। यदि दण्ड का भय न हो तो प्रायः सभी प्रजा अपथगामी बन जाया करती है। समाज में जो दुष्ट वर्ग होता है, उसका नियमन दण्ड से ही किया जाता है। दण्ड ही सबको अनुशासन में रखता तथा उसकी रक्षा करता है। सके सो जाने पर भी राजदण्ड जगता रहता है। बुद्धिमान लोग दण्ड को ही धर्म मानते हैं। दण्ड का मुख्य उद्देश्य अपराधों को रोकना तथा राज्य के प्रति विरोधी शक्तियों को समाप्त करना है। राज्य में इस कार्य को अध्यापक उचित अध्ययन द्वारा, उपदेशक शिक्षा द्वारा तथा राजपुरुष दण्ड द्वारा करते हैं। वीर पुरुष डाकू आदि का विशेषतया नाश करने में कठिबद्ध रहते हैं। राजपुरुष यह प्रतिज्ञा करते हैं कि हम सर्वदा प्रजा की रक्षा करेंगे तथा डाकू, चोर, लम्पट, कपटी, कुमार्गी, अन्यायी और कुकर्मियों को निरन्तर दण्ड देंगे। धर्मात्मा राजपुरुष अपने अनुकूल सेना और प्रजा का सत्कार करें तथा विरोधी सेना तथा प्रजा एवं डाकू, चोर, खोटे वचन बोलने वाले, मिथ्यावादी, व्यभिचारी मनुष्यों को अग्नि दाह आदि भयंकर दण्डों से शीघ्र ताडना देकर वश में करे।

कर व्यवस्था

राज्य कार्य संचालनार्थ राजा को धन की आवश्यकता होती है। उसके लिए वह प्रजा से कर लेता है। राजा द्वारा प्रजा से जो कर लिया जाता है, वह अपने भोग–विलास के लिए नहीं अपितु कालिदास के शब्दों में 'सहस्र गुणमुत्त्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः' के आधार पर प्रजा के हितार्थ कार्यों में लगाने के लिए प्रजा से लिया जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि अराजकता तथा मत्स्य न्याय के निवारणार्थ राजा की आवश्यकता होती है। राजा स्वयं मर्यादा में रहकर सबको मर्यादित जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करता है। उसके जीवन में सत्य, धर्म, न्याय, परोपकार आदि गुण होने चाहिए। उसका निर्वाचन प्रजा के उच्च कोटि के विद्वान तथा धार्मिक जन करें। राजा को राज संचालन हेतु तीन सभाएँ स्थापित करके राज्य की आन्तरिक तथा बाह्य सुरक्षा व्यवस्था, विद्या तथा धर्म प्रचार कार्य सम्यकतया करने चाहिए। न्याय व्यवस्था द्वारा अपराधी को शीघ्र व उचित दण्ड मिलना चाहिए। प्रजा का रक्षण तथा पालन, ये दो कार्य करना राजा का मुख्य कर्त्तव्य होता है। राजा अपने सुप्रबन्ध से बाँध निर्माण द्वारा अतिवृष्टि का, नहर आदि के निर्माण से अनावृष्टि का, विशेष प्रकार के घर बनाकर भूकम्प आदि का प्रतिकार करे। इस तरह आधिदैविक विपत्तियों से राज्य प्रजा को बचाता है। वह अपनी न्याय व दण्ड व्यवस्था द्वारा आधिभौतिक कष्टों से तथा विद्यासभा एवं धर्मसभा द्वारा आध्यात्मिक दुःखों से प्रजा की रक्षा करता हुआ प्रजा का पुत्रवत् पालन करे। यदि विश्व के सभी राष्ट्र ये उपर्युक्त वैदिक राजधर्म अपना लें तो आदर्श राष्ट्र स्थापित होकर निःसन्देह विश्वशान्ति स्थापित हो सकेगी।

'ओ३म् शम्'

सन्दर्भ

1. सभ्य सभा में पाहि ये च सभ्याः सभासदः। अथर्व. स.प्र. षष्ट समु।
2. राष्ट्रमेव विश्याहन्ति तरमाद्राष्ट्री विंश धातुकः। शत. 13/2/3/71।
3. यजु. 6/27, 7/23, 7/35, 6/2, 9/2, 10/17, 12/6, 11/22, 16/26, 8/23 व. भ्राष्य।
4. यजु. 12/11, 34/15 द. भाष्य।
5. इमे देवा असपत्नं सुदध्यं महते क्षत्रार्थ – महते जानराज्याय। यजु. 9/40।
6. विद्वांसो हि देवा। शत. 3/7/2/10।
7. आ यो राजानमध्यरस्य रुद्र होतार सत्यज सेदस्योः
8. उशिक् पावको वसुर्गानुषेषु वरेण्यो होता धापि विक्षु दमुनागृहपति – 1 ऋ. द. भा. 1/60/4।
9. स नो नृणां नृतमो रिशादा अग्निर्गिरोडवसा वेतु धोतिन। ऋ. 1/77/4।
10. त्वामग्ने दम आ विश्पति विशस्त्वां राजानं सुविदमृंजते।
11. अग्ने द्युमनेन जागृते सहः सूनवाहुद। एद बर्हि सदोमम। ऋ. द. भा. 2/1/81।
12. ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्र विरक्षति। अथर्व. 11/5/17।
13. यजु. द. भा. 10/17।
14. श्रीणि राजाना विदर्थ पुरुणि परि विश्वानि भूषथः संदासि। ऋ. द. भा. 3/30/6।
15. तं सभा च सनितिश्च सेना च। अथर्व. 15/9/2।
16. यजु. 11/33, 11/46, 9/29, 12/32, 15/60, 28/41।
17. यजु. 12/59, 27/8, 16/11, 12/60।
18. अस्य देवस्य संसद्यनीके यं मर्तास श्येतं जगृभे। ऋ. 7/4/3।
19. तव सभायाम् एषां मध्येऽमाकासः सूरयो वीराश्च सन्ति ते सभासदः सन्तु। ऋ. 1/79/3 'अन्वय'।
20. ऋ. 4/10/61।
21. ऋ. द. भा. 4/4/15।
22. ऋ. द. भा. 7/1/10।
23. ऋ. द. भा. 1/36/4।
24. ऋ. द. भा. 4/9/6।
25. यजु. द. भा. 12/33।
26. यजु. द. भा. 29/50।
27. यजु. द. भा. 29/48, 34/7।
28. ऋ. द. भा. 4/9/8।
29. ऋ. द. भा. 4/15/5।
30. ऋ. द. भा. 5/6/9।
31. आशुः शिशानो वृषभो न धीमो धनाधनः क्षोभणश्चर्षणीनाम्। सकन्दोऽनिमिष एकवीरः शत सेना अजयत् साकमिन्दः।। यजु. द. भा. 17/33।
32. व. यजु. 13/11.15.1 द. भा।
33. यजु. द. भा. 7/36, 15/61।
34. यजु. 11/26।
35. यजु. 7/19।
36. यजु. 6.22, 23/28।
37. यजु. 35/19।
38. यजु. 8/23।
39. दण्डः शास्ति प्रजा सर्वादण्ड एषाभि रक्षति। दण्डः सुष्तेषु जागर्ति दण्डं धर्म विदुबुंधा।। मनु. 7/19।
40. यजु. द. भा. 11/60।
41. यजु. द. भा. 11/34।
42. यजु. द. भा. 6/22।
43. यजु. द. भा. 11/77।
44. रघुवंश सर्गः।
45. यजु. द. भा. 33/11, 6.6'ओ३म् शम्'।